मासिक—

मानव मन्दिर

सम्पादक :

एम० आर० भक्त
पी. एस. ई. (रीटायर्ड)

वर्ष 8	शुक्रवार 10 जुलाई 1981	संख्या 3

नाम क्या है ?

सत्संग हजूर परम दयाल जी महाराज मानवता मन्दिर होशियारपुर ।

दिनांक १४-१२-१९८०

मैंने प्रण किया था कि मेरे जीवन में जो अनुभव होगा बता जाऊंगा । हर मत, हर धर्म, हर पन्थ ने अपने आप को बहुत बड़ा साबित किया है । नाम वालों ने कहा जो कुछ है नाम ही नाम है। शिवजी के उपासकों ने कहा कि जो कुछ है शिव ही है। गुरु के भक्तों ने कहा जो कुछ है गुरु ही है । मैं अपनी आत्मा से पूछता हूं फ़कीरचन्द ! तूने नाम जपा, तुझे क्या मिला ? मेरी सारी आयु नाम जपने में चली

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

गई। सन् १९०५ से लेकर आज तक मैं नाम ही जपता आया हूं। मैं अपनी आत्मा से पूछता हूं, बता फ़कीर चन्द ! तुमको क्या मिला ?

जो कुछ मिला उसको बताने के लिए मेरे पास कोई शब्द नहीं। अगर उसको बयान करूं तो दूसरा भ्रम में पड़ जायेगा। यह है साधन का विषय अर्थात् अपने आप में नाम जपने का विषय है। जिन्होंने नाम जपा वे ही समझ सकते है कि हमें क्या मिला। अब यह प्रत्येक पन्थी अपनी आत्मा से पूछे कि तू नाम धारी है, तू बता क्या मिला ? मिलना तुझे क्या था ? जिस आदमी को इस जीवन में शान्ति है, किसी वस्तु की इच्छा नहीं, निभ्रान्त है, उसको नाम मिल गया और जब तक कोई चाह शेष है या किसी प्रकार का भय, चिन्ता या फ़िक्र है उस समय तक नाम नहीं मिला। मैंने यही समझा है। अब दाता दयाल का शब्द सुनिये :—

पीले-पीले सुधा रस नाम, तेरा नर जन्म बने।

यह मुझे मालूम नहीं कि दाता दयाल का जन्म बनाने से क्या मतलब है । मैंने तो जन्म बनाना यह समझा कि जो इस जीवन में सुखी, प्रसन्न, बेफ़िक्र, निश्चिन्त है उसका उसका जन्म बना हुआ है । जिस को इस जीवन में कोई दुःख, अशांन्ति, चिन्ता, फ़िक्र, डर या ग़म है उसका जन्म नहीं बना । मैं तो जन्म बनाने का अर्थ यह समझता हूं और मेरी समझ मे कुछ नहीं आया । तो क्या इस नाम जपने से जन्म बन सकता है ? अब रोचक बातें तो सब कह देते हैं कि नाम ले जाओ, जन्म बन जायेगा । कितनों ने हो नाम लिये हुए हैं । कोई राम, कोई अल्लाहू जपता है, कोई पांच नाम जपता है, कोई राधास्वामी नाम जपता है और कोई 'ओम् नमो भगवते वासुदेवाय' नाम जपता है । सब ही जपते हैं । अब प्रश्न यह है कि जो जपते हैं उनको इस नाम के जपने से क्या मिला ? कल एक आदमी मेरे पास आया, उसके घर के अपने झगड़े थे । वह नाम धारी है परन्तु अब उसको पौत्रों और पुत्रों की चिन्ता है । तो जिसको इस प्रकार की चिन्ता है उसको नाम कहां मिला ? जब तक कोई न कोई वासना या इच्छा मानव के

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

अन्तर में विद्यमान है तब तक नाम नहीं मिला। हम सोचते हैं कि हमारी लड़की की शादी हो जाये, हमारे पौत्र हो जाये, हमारे यह हो जाये। जब तक सांसारिक इच्छाएं हमारे अन्तर में विद्यमान हैं तब तक लाख कोई राम नाम जपे या कोई अन्य नाम जपे उसको नाम नहीं मिला। मेरी समझ में यही आया है।

फिर वह नाम क्या है जिससे यह सभी चीजें चली जाती हैं ? मैं अपने जीवन को देखता हूं। अपनी आत्मा से पूछता हूं कि क्या राधास्वामी-राधास्वामी जपने से या सारी आयु ध्यान और शब्द सुनने से मेरे अन्तर में यह अवस्था आ गई जो मैंने नाम के सम्बन्ध में व्यान की है ?

नहीं आई! जो मैं अन्तर में शब्द सुनता था वह मुझे आनन्द देता था। मगर सुमिरन करने, शब्द के सुनने अन्दर में प्रकाश के होने व मस्ती के आने से भी फिर, मैं सांसारिक झगड़ों में फंसा। अनेकों मैंने अभ्यास किये। मस्ती की वह हालत, थी जिसका कोई हिसाब

नहीं। मगर क्या फिर मुझे दुःख, चिन्ता व फ़िक्र नहीं आता था ? उसने वह हालत नहीं पैदा की जिससे मेरा जन्म बन जाये । यही भेद है जो मैं बताना चाहता हूं। वह कब आई ? जब मुझे मन के रूप की समझ आई। विश्वास हो गया कि मन की जितनी कल्पनाएं हैं, मेरे अन्दर जितने संकल्प व ख्यालात उठते थे यह कल्पित थे, हैं नहीं। सब माया थी। यह तो सारा मन का ही खेल था । तो मैं अब मन के खेल को खेल समझ कर इसमें फंसता नहीं और जब मैं मन के खेल को खेल समझ कर मन में फंसता नहीं तब मुझको वह अवस्था मिली। यही मुझको कोई किसी का प्रेम या मुहब्बत दुःख या सुख नहीं व्यापता। मगर अब जब शारीरिक कष्ट होता है तो नानी याद आ जाती है। झगड़ा तो सारा मेरे मन के मानने का था । तो फिर वह नाम क्या हुआ ? मैं नहीं चाहता कि जो कुछ मैं कहता हूं यही अन्तिम है। मैंने जो समझा वह मैं कहने का अधिकार रखता हूं। शायद दूसरे सन्तों का नाम कोई और हो। जब नाम मिल जाता है फिर क्या हो जाता है ? दाता दयाल कहते हैं :—

क्यों जन्मे मरे, क्यों जग से डरे,
क्यों त्रास करे क्यों गिरे पड़े।

अब देखो ! जिसको वह नाम मिल जाता है; वह न जन्मता है न मरता है। अब क्या यह ठीक है ? हां ठीक है। मेरी समझ में आ गया कि मैं कौन हूं। परम तत्त्व में हिल्लोर उठने से केन्द्र बन जाता है, उसमें एक मैं आ जाती है। जब केन्द्र टूट जाता है तो मैं टूट जाती है। तो फिर मेरे लिए जन्म-मरण क्या हुआ। न कोई वस्तु जन्मती है न मरती है। केवल वह जो मेरी मैं थी; मेरी अकल थी, जो मैं किसी को मानता था उस मानने ने मुझे फंसाया हुआ था। वह मेरा मानना ही था, जो मैं जन्मता हूं और मरता हूं। जीवन क्या है ? सोड़े और टाटरी को मिला दो तो शू-शू होती है। इसी प्रकार जब प्रकाश शरीर में आ जाता है तो सनसनाहट आ जाती है। कहीं शारीरिक जीवन है, कहीं मानसिक जीवन है, कहीं आत्मिक जीवन है। जब वह ख़त्म हो जाती है तो न कोई आया और न कोई गया। कौन आया और कौन गया ? 'साधो ! आवे जावे सो माया' इससे

मुझे क्या मिला ? मेरा आना जाना समाप्त हो गया। भ्रम चला गया कि आवागमन है या नहीं। अनुभव हो गया :—

क्यों जन्मे मरे, क्यों जग से डरे,
क्यों त्रास करे क्यों गिरे पड़े।

वह नाम क्या है जिससे इन्सान न जन्मता है, न उसे मरने का भय है, न उसको जगत् से भय लगता है। भय कैसे लगेगा ? वह तो समझता है कि मेरा है ही कुछ नहीं। जिसको अपने इस रूप का ज्ञान हो जाता है उसके लिए यह सब चीजें नहीं हैं तो फिर नाम क्या हुआ ? अपने रूप का ज्ञान हासिल करना ही नाम की प्राप्ति है। इसके सिवाय नाम कोई चीज नहीं। वरना सारी आयु तुम बेशक सुमिरन करते रहो, राधास्वामी-२ राम-राम रटते रहो, अगर ज्ञान नहीं हुआ तो यह आवागमन या जन्म मरण का तुम्हारा चक्कर समाप्त नहीं होगा। यही मेरी समझ में आया है :—

दाता माता नाम का, ले अमृत रस चाख,
माया काल का सगतज, निश्चय गुरु का राख।

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

मुझे समझ में माया और काल की समझ नहीं आती थी। देखो! जब मैं दाता से इतना प्रेम किया करता था तो वह मुझे कहा करते थे कि क्यों पागल हो गया है। देखो! कुछ कहना चाहता हूं। जब मैं दरबार में जाता था तो लोगों को कहा करते थे उस बावले फ़कीर को बुलाओ और मैं उस समय यह समझता था कि यह मुझे प्रेम से बावला कहते हैं। अब मैं समझा हूं कि वास्तव में बावला था। मैंने दाता दयाल के शरीर को जफ्फी मारी हुई थी तो वह मेरी जफ्फी मारनी क्या थी, वह मेरी माया थी। मैं उस माया में फंसा हुआ था। उन्होंने अजीव ढंग से मुझे इस जाल से निकाला। यह मत समझो कि मैं गुरु मत के विरुद्ध हूं। मगर जिस प्रकार मैंने दाता दयाल को पूजा, यह गुरु पूजा का अर्थ नहीं है। सत्संग में आकर गुरु की बात को सुनो, गुनो और विचार करो और उसके अनुसार अपना जीवन बनाओ तव तुम गुरु भक्त हो। और अगर मेरी तरह जफ्फी मारोगे तो तुम मनमत और मायामत हो। यह समझ मुझे अब आई। उस समय मैं समझता

था कि मैं बड़ा प्रेमी हूं। वास्तव में मैं बड़ा मूर्ख, अज्ञानी और गन्दा व्यक्ति था। मैं नहीं चाहता कि लोग फ़कीर चन्द को इस प्रकार पूजें जिस प्रकार मैंने दाता को पूजा है। मेरा दाता दयाल को जा पूजना था, वह मेरी माया थी, मेरा अज्ञान था, मेरा भ्रम था। मगर दाता ने बड़े निराले ढंग से मुझको इस चक्कर से निकाला और वे कहा करते थे :—

काहे बौराना हाये फ़कीरवा,
तेरे घट में माल खजाना,
तू भया दीवाना।

ऐसे-ऐसे शब्द लिखते थे। मैं उनको गुरु मानता था। तो वह कहा करते थे :—

गुरु तो तेरे पास फ़कीरवा गुरु तो तेरे पास,
तेरे तन में तेरे मन में तेरे स्वांसो-स्वांस।
गुरु नहिं काशी, गुरु नहिं मथुरा,
गुरु नहिं बिच कैलाश।
ढूंढ़ अपने हृदय में वहां है उनका वास।

मैं यह समझता था कि जब मैंने चाहा तो दाता का रूप अपने अन्तर में बना लिया तो गुरु मेरे अन्तर आ गया। अब जब तुम लोगों ने कहा कि मेरा रूप तुम्हारी सहायता करता है तो मैं हैरान हो गया। तो इस से साबित हुआ कि मैं तुम्हारे अन्तर नहीं गया। तुम्हारा अपना मन ही तुम्हारे अन्तर गया। तुम्हारा अपना मन ही गुरु है, तुम्हारा मन ही चेला है। वास्तविक गुरु इस माया और काल से परे है। यानि वह मन के संकल्प व चक्कर से परे निकल जाना है। मैं अभी फंस तो जाता हूं मगर मुझे निकलने का रास्ता मिल गया, समझ मिल गई। मैं अभी भी फंस जाता हूं, आप से झूठ नहीं बोलता। मेरे कर्म खोटे हैं या मैंने पिछले जन्म के कुछ कर्म भोगने होंगे। मगर मुझे रास्ता मिल गया। तो काल और माया से परे हम कब जायेंगे ? जब हम को यह ज्ञान हो जायेगा कि जो कुछ हमारे अन्तर फुरना फुरती है या कल्पना होती है या मन संकल्प करता है, यह माया है। वास्तव में यह है नहीं। लाख कोई किसी को गुरु मान

ले, जो इच्छा हो करे, जब तक यह ज्ञान दृढ़ नहीं होता किसी का भी आवागमन समाप्त नहीं होगा तथा न ही कोई इस संसार से पार जा सकता है। यही शास्त्र कहते हैं कि ज्ञान के बिना मुक्ति नहीं हैं। ज्ञान, लोगों ने यह समझा हुआ है कि मैं ब्रह्म हो गया, मैं खुदा हो गया। यह नहीं। ज्ञान वह है जो मैंने ऊपर बताया कि हम कल्पना या मन रूपी माया में फंसे हुए हैं। यही है राज़। यह जो ऊंची बात है इसको मैं समझता हूं। शायद आप लोग न समझ सकें। तो फिर तुमने क्या करना है ? एक काम करो कि जिस गुरु को मानते हो उसको आदमी मत समझो। उसको माया और काल से परे रहने वाला समझो। यदि तुम्हारा इतना भी प्रेम हो जाये तो जब तुम मरोगे, क्योंकि तुमने ऐसे रूप से प्यार किया हुआ है जो माया और काल से परे हो सकता है तो तुम्हारा बेड़ा पार हो जायेगा। इसी लिए कहा हुआ है :—

गुरु को मानुस जानते, ते नर कहिये अन्ध,
दु:खी होये संसार में, आगे जम का फ़न्द।

और आजकल हम क्या करते हैं ? किसी से पूछो तेरा गुरु कौन है ? वह कहता है फकीर चन्द। हालांकि सन्तमत के संचालक कबीर साहिब कह गये कि गुरु को मनुष्य जानने वाला व्यक्ति अन्धा यानि अज्ञानी है। मैं यह सच्चाई इसलिए बताता हूं कि लोग फकीर चन्द को गुरु न समझें और गुरु के वास्तविक रूप को जो मैं बताना चाहता हूं उसको समझें ताकि मेरी आत्मा पर गुरु बनने का कोई पाप और बोझ न आये। मैं किसी को धोखा देना नहीं चाहता बल्कि सच्ची बात बता देना चाहता हूं कि गुरु, फकीर चन्द या किसी व्यक्ति का नाम नहीं। गुरु ज्ञान और अनुभव का नाम है। मगर यह शीघ्र नहीं मिलता। तो नाम का अधिकारी कौन है :—

विषयों से जो होये उदासा, परमार्थ की जा मन आसा।
धन सन्तान प्रीत नहीं जाके, खोजत फिरे साध गुरु जागे।

जो विषय-विकार से रहित है, जिसे धन दौलत से मोह नहीं है उसी के लिए नाम है। यह तो हम गुरुओं ने अपना डेरा बढ़ाने के लिए

किया और जो भी आया उस को नाम दे दिया। हम को मिला क्या ? हम लोगों ने इस अज्ञान की भक्ति के धोखे में आकर के अपने बच्चों के पेट काट-२ कर के गुरुद्वारे, डेरे और मन्दिर बना दिये। क्या कुछ नहीं किया। यह सन्तमत वालों, सनातनियों, पण्डितों और धर्मों वालों ने या किसी ने भी हम को सच्चाई नहीं बतायी बल्कि हमको मूर्ख बना कर लूटा और इसका परिणाम पारस्परिक ईर्ष्या, द्वेष और झगड़ा है :—

दाता माता नाम का ले अमृत रस चाख,
माया काल का संग तज निश्चय गुरु का राख।
तेरा नर जन्म बने।

किस गुरु का निश्चय रखो ? फ़कीर चन्द का, महर्षि शिवव्रत लाल जी का या किसी और गुरु का ? ऐ इन्सान ! वह गुरु कौन है जिसका तूने निश्चय रखना है, वह गुरु तेरी अपनी ज़ात है। जिससे तू अंश रूप से निकला हुआ है। वह तेरी अपनी ही ज़ात है, तू इससे भिन्न नहीं। अपनी ही ज़ात पर आप भरोसा रखो। गुरु बाहर नहीं

है। यही सन्तमत का सार है। मगर क्योंकि आदमी अपने ऊपर भरोसा नहीं रख सकता इसलिए उसका एक रूप माना जाता है और उस रूप को पूरा माना जाता है। इसलिए जो व्यक्ति गुरु को इन्सान समझ कर सीमित समझते हैं उनको सिद्धि शक्ति मिल जायेगी, उनके कारोबार हो जायेंगे मगर जो निर्वाण की असल मंजिल वेफ़िक्री, शान्ति और निर्भ्रान्ति है, वह नहीं मिल सकती :—

नाम जपत भवसिन्धु तरे, पापी पतित अनेक।
ज्ञान भक्ति सब नाम में, धार नाम की टेक।

पापी सब नाम से तर जाते हैं। क्या यह ठीक हैं ? मैं कहता हूं हाँ, यह ठीक है। कैसे ठीक है ? पाप-पुण्य, धर्म-कर्म का सम्बन्ध मन के साथ है। जो आदमी अपना साधन करके अपने आप को इस मन के चक्कर में नहीं फंसाता बल्कि इससे परे हो जाता है उसने कितने भी पाप व कुकर्म किये हुए हैं, सब के सब समाप्त हो जायेंगे। जैसे एक देश का नियम दूसरे देश में लागू नहीं

होता. ऐसे ही मन के चक्कर में आने वाले लालची, कामी, क्रोधी जितने भी हैं अगर हम नाम की समझ आ जाये तो हम मन को छोड़ कर प्रकाश और शब्द को अपना इष्ट बना लें। तो जब हम मरेंगे तो चाहे कितने ही पाप किये हुए हैं उनका हम पर कोई प्रभाव नहीं होगा। यह बिल्कुल सत्य बात है, किसी की समझ में न आये तो मेरा कोई दोष नहीं। मैं अपनी ओर से समझाने की पूरी कोशिश करता हूं। जितने हम कर्म करते हैं यह सारे मन के साथ ही हैं। सोचते हैं, विचारते है, रूप व शक्लें देखते हैं, यह सब मन ही है। अगर हम इस मन को छोड़ कर जो धुनात्मक नाम है उसको पकड़ लें और प्रकाश और शब्द में चले जायें तो जब हम मरेंगे, तो जो हमारी सुरत है वह तो प्रकाश और शब्द में होगी, मन के चक्र को छोड़ हुये होगी तब मन-रूपी चक्र के जितने भी नियम हैं वह सभी मन पर प्रभाव नहीं कर सकते। इसलिए जब तक किसी को यह ज्ञान नहीं है कि यह सब मन की कल्पना है जो कुछ फुरता है यह वास्तव में है नहीं, Impressions यानि संस्कार हैं जो पड़े हुए हैं। तब तक चाहे तुम ने लाख नाम जपे हुए हैं, लाख किसी

की सेवा करो, जो इच्छा हो करो, तुम इस भवसागर से पार नहीं जा सकते :—

नाम जपत भवसिन्धु तरे, पापी पतित अनेक।
ज्ञान भक्ति सब नाम में, धार नाम की टेक।

अब समझे कि वह नाम क्या है ? केवल मुंह से राधास्वामी-२ करना या बैठ कर गुरु का ध्यान करना, नाम नहीं है। यह तो केवल मन के चक्र हैं, मन को संसार का जीवन बनाने के लिए हैं। जो व्यक्ति पार जाना चाहता है उसको मन से परे प्रकाश और शब्द को पकड़ना पड़ेगा। अगर वह ऐसा नहीं करता, बेशक वह लाख प्रयत्न करता फिरे, इसका कोई लाभ नहीं। यह इसका अर्थ है। आज मुझको यह सच्चाई मालूम न होती तो मैं इस सन्तमत के विरुद्ध कह जाता। मैं जीवन भर सच्चाई की तलवार की धार पर चला हूं। मैं देखना चाहता था कि सन्तमत की शिक्षा क्या है, ये क्या कहते हैं। जिन्होंने हमारे हिन्दु अवतारों और सब महापुरुषों का खण्डन किया और कहा कि कोई धर्म मुसलमान, हिन्दु, जैन, ईसाई

इनमें से कोई भी सच्चा नहीं। अब विवश होकर कहना पड़ता है कि जो कुछ स्वामी जी या कबीर साहिब ने कहा; वह सत्य है। मगर हम लोगों को यह सत्यता बतायी नहीं जाती बल्कि आज कल गुरु की नीयत हमको अपने डेरों में फंसाने की होती है। सच्चाई कोई नहीं बताता। मगर इसको भी दोष नहीं गिना जाता। संसार सच्चाई को समझने के लिए ध्यान नहीं देता। तो नाम फिर क्या हुआ ? नाम, इस मन के चक्र से परे होना है। जब तक मानव अपने आप को इस मन रूपी चक्र से परे नहीं ले जायेगा उसको इस नाम की प्राप्ति नहीं हो सकती :—

कामी, क्रोधी, लालची, पापी तरे अनन्त;
नाम ही के प्रताप से पावे पदवी सन्त।

सन्त कौन होता है ? अर्थात् जो सत्त में रहे उसे सन्त कहते हैं। यह अर्थात् सत्संगी, साधु, हंस, परमहंस, सन्त और परम सन्त, ये जीवन की अवस्थाएं हैं। सत्संगी कौन है ? जिसको सत्त की इच्छा हैं वह सत्संगी है। साधु कौन है ? जो अपने

मन से साधन करता है। हंस कौन है ? जिसमें विवेक शक्ति आ जाती है या बात का निर्णय कर सकता है। सत्त और झूठ क्या है ? परमहंस क्या है ? जिसको आध्यात्मिक निरख-परख आ जाती है। सन्त कौन है ? जो मन रूपी चक्र को छोड़ कर अपने प्रकाश और शब्द में रहता है।

नाम नाम में भेद है, नाम नाम में भाव।
सोई नाम को सिमरिये, जो गुरु बतायें दाव।

एक हो मार्ग पर हाँकता है वह गुरु नहीं है। प्रकृतियां भिन्न हैं। सब कुछ भिन्न-२ है :—

धुनात्मक सोई नाम ले, वरणात्मक तज डार।
राधास्वामी की दया, भव से जावे पार।।

वर्णात्मक यानि जो नाम तुम अपने मन, जिह्वा या ख्याल से लेते हो, वह नाम नहीं है। जो आवाज़ अन्तर से आती हैं; वह नाम है, उसको पकडो। उसको धुनात्मक नाम कहते हैं। आज मैंने …ी महिमा पर यह बात कही।

झगड़े देखे । यह केवल धर्मों की रोचक शिक्षा है ।

अगर कोई सन्त है, [illegible]

ाम, नाम म [illegible]

ं ओंकार को, कोई शरभंकार या सोहंकार

ो नाम बताता है । वास्तविक नाम क्या है ?

यह तुमको गुरु बतायेगा । जो अच्छे पूर्ण

गुरु होते हैं वे यह ऊंचा नाम प्रत्येक व्यक्ति

को नहीं बताते, बल्कि जिस, प्रकार का, जिस

प्रकृति वाला व्यक्ति उनके पास जाता है,

वे उसकी इच्छा पूर्ण करने के लिए उसको

उपाय बताते हैं । सांसारिक व्यक्ति को तो दुनिया को

बात बता देंगे । जो परमार्थ का इच्छुक हो उसको

परमार्थ की बात बता देंगे । जो व्यक्ति सबको

सलिए

ी को

है ।

ाफ

उसे

ने

न

अपने रूप का ज्ञान प्राप्त करना ही नाम की प्राप्ति कहा गया है । दुनिया ने अपने रूप के ज्ञान को यह समझा हुआ है कि हम परमतत्त्व या वह शक्ति हो गये या किसी ने अहं ब्रह्म या अहं सत्यम् कह दिया, मगर मैं ऐसा नहीं समझता । मैं क्या समझता हूं ? मेरी सुरत, आत्मा, मन

और मेरे शारीरिक वोध-भान यह प्रकृति के मेल से पैदा होते हैं। जब यह प्रकृति बिखर जाती है तो जो वस्तु पैदा हुई हुई होती है वह समाप्त हो जाती है। जब सबसे ऊंचे कारण प्रकृति में गति होती है, उस गति में शब्द के होने से जो सनसनाहट या चेतना पैदा होती है उसको मैं सुरत कहता हूं। जब वह नीचे प्रकाश में आकर प्रकाश का केन्द्र बनता है उसमें जो सनसनाहट पैदा होती है उसको मैं आत्मा कहता हू। आगे जो शारीरिक ख़यालात पैदा होते है उसको मैं मन कहता हूं और शारीरिक जीवन में गति होने के कारण जब एहसास पैदा होते हैं, यह जीवपना है। प्रकृति के खेल हैं। जब यह केन्द्र टूट जाते हैं फिर कौन आया, कौन गया, बुलबुले बनते हैं और टूट जाते हैं तो धुनात्मक शब्द को सुनना व पकड़ना ही नाम की प्राप्ति है। यह मेरी 95 बर्ष की आयु का अनुभव है। हो सकता है मैं ग़लत हूं, कोई दावा नहीं।

सत्संग हज़ूर परम दयाल जी महाराज मानवता मन्दिर होशियारपुर ।

दिनांक १३-४-८१—प्रातः

सन्त ताराचन्द ने सद्गुरु की महिमा गायी और कहा कि जो कुछ करता है वह गुरु ही करता है। सब कुछ गुरु ही करता है। मगर वास्तविकता क्या है ? मैं चाहता हूं कि सन्त ताराचन्द अपनी आंखें खोले। दाता दयाल जी महाराज की वाणी सुनाता हूं कि असली सद्गुरु जिस की यह प्रशंसा करते हैं, वह कौन है ? और वह कहां रहता है ? सन्त ताराचन्द जी ! ज़रा सोच समझ कर सुनो :—

साधो गुरु का रूप लखाऊं।
जो कोई आवे मेरी सभा में, गुरु का रूप लखाऊं।

सत् रज तम की हद से बाहर, गुरु मूरति दरसाऊं।
निर्गुन सगुन देह नहीं जाके, अद्भुत भेद जताऊं।
हाड़ मांस नाड़ी नहीं जाके, वाके रूप न नाऊं।
सबका सबमें सबसे न्यारा, मरम विचित्र जताऊं।
रूप अरूप स्वरूप अनूपा, निराकार ठहराऊं।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, पल पल गुरु गुनगाऊं।

अब यह गुरु का रूप है क्या ? मैं चाहता हू ताराचन्द तू परमसन्त बन जाये। अभी तेरी अवस्था साधु की है; तू सन्त नहीं बना, बन जायेगा। जब सन्त बन जायेगा उस समय जो तेरी Rediation जायेगी वह दूसरों को शान्ति देगी। सन्त की Rediation से शान्ति मिलती है, साधु की Rediation से उत्साह और खुशी मिलती है। वह सद्गुरु कौन है ? जब मैं मन को छोड़ जाता हूं तब आगे प्रकाश और शब्द है। जो चीज मेरे अन्दर प्रकाश को देखती और शब्द को सुनती है वह सद्गुरु है। वह कौन है ? वह मेरी अपनी ही जात है, दूसरा कोई नहीं। मगर यह ऐसा विषय है जिसको प्रत्येक व्यक्ति समझ नहीं सकता इसलिए अवस्थाएं हैं। तो जिस दर्जे में सन्त ताराचन्द ने कहा है यह जीवन को उभार सकता

है, यह गुरुमुख है।

गुरुमुख कोटिन जीव उभारे।

गुरुमुखों के कारण लोग सत्संग में आते हैं। मेरा काम अब गुरुमुख का नहीं रहा। I am the liberator, मेरे पास तो जो आयेगा मैं तो उसे स्वतन्त्र करना चाहता हू। गुरुमुख के पास जो कोई आयेगा वह उसे सत्संग में फंसायेगा और उसे फंसाना भी चाहिए क्योंकि जब तक वह फंसेगा नहीं स्वतन्त्र कैसे होगा? हर वस्तु की stages हैं।

किसी व्यक्ति ने मुझे लिखकर भेजा है जिसमें नाम तो लिखा नहीं और लिखा है—पूज्य बाबा जी! जिन व्यक्तियों को आपने काम सौंपा है क्या वे संसार से स्वतन्त्र होने की ऊंची शिक्षा देंगे? या संसार में फंसाने की कोशिश करेंगे? मैं इसका उत्तर देता हू। दाता ने मेरे कल्याण और मेरी आंखें खुलवाने के लिए मुझे यह काम दिया था न कि आप लोगों के कल्याण के लिए। उन्होंने कहा था—तुमको काम देता हू। तुम यह न समझना कि तू किसी का बेड़ा पार करेगा। तुमको सच्चा ज्ञान देने, इस माया देश से निकालने और

इस मन से छुटकारा देने वाले सत्संगी, गुरु के रूप में आकर तेरा बेड़ा पार करेंगे। तो मैंने जिन व्यक्तियों को यह काम दिया है उनको इसलिए दिया है कि जब उनको अनुभव से समझ आ जायेगी तो वे दुनिया को लूटेंगे नहीं बल्कि अपने जीवन को बना कर मन से ऊपर चले जायेंगे। इसलिए मैंने इनको यह काम दिया है। इसलिए नहीं दिया कि ये दुनिया का उपकार करें। दुनिया का परोपकार तो कोई नहीं कर सकता। यहां लाखों आये पीर, लाखों आये पैग़म्बर, क्या दुनिया बन गयी ? ये सन्त अपनी पत्नियों व लड़कों के आचरण को ठीक न कर सके तो तुम्हारा कहां से उद्धार करेंगे। तो जो गुरु अपने लड़कों को ठीक नहीं कर सकता वह तुमको ठीक कैसे करेगा। दीवानो ! तुम ने अपने आप ठीक होना है। देखो, मैं तुमको धोखा नहीं देता। गुरु ने जो कुछ सीखा, चेले से सीखा। आप पूछेंगे, क्या ? राधास्वामी मत की पुस्तकें पढ़ो। लोगों ने स्वामी जी महाराज के पास जाकर प्रशंसा की कि राय साहिब सालिगराम साहिब आपके बड़े प्रेमी हैं यह है, वह है, तो स्वामी जी ने जो कहा वह

पुस्तक में लिखा हुआ है कि क्या ख़बर सालिगराम मेरा गुरु है या मैं सालिगराम का गुरु हूं। मैं जब लाहौर जाया करता था तो दाता दयाल जी महाराज सत्संग में कहा करते थे कि यह फ़कीर तारने के लिए आया है। यह मेरा बेड़ा पार करने के लिए आया है। क्यों कहते थे? जिस प्रकार मैं कहता हूं कि ऐ सत्संगियो! तुम मेरे गुरु निकले। अब यह I.C. Sharma है। मैं इसे गुरु न मानूं तो किसे मानूं! सन् 1957 में इसके अन्दर मेरा रूप प्रकट हुआ और उसने कहा—तेरा इस जन्म में काम हो जायेगा। सन् 1965 की बात है मैं देहली में बिरला मन्दिर में सत्संग दे रहा था। इसने मुझे पहचाना और कहा—जी! आप ही थे। मगर मैं कहता हू—मैं नहीं था। मैंने इसको इसलिए काम दिया कि एक तो इसके पिछले कर्म कट जायेंगे और जो इसके मस्तिष्क के अन्दर Intellect का जज़बा है वह समाप्त हो जायेगा। दूसरे, दूसरों के अनुभव से यह लाभ उठायेगा। जो आधुनिक गुरु हैं वे इस बात का पर्दा रखकर चेलों से धन लेते हैं खाते हैं, तथा

मांग लेते हैं। मगर याद रखना चाहिए कि जब युधिष्ठिर जैसे धर्मात्मा व्यक्ति को थोड़ी सी Policy करने से $2\frac{1}{2}$ घड़ी का नरक मिला तो जो-जो गुरु, लोगों को सच्चाई नहीं बताता और मुंह बनाकर पैसे लेता है तथा लोग उसका मान करते हैं तो उस गुरु का क्या हाल होगा। जिस प्रकार मैंने यह ज्ञान सत्संगियों से प्राप्त किया इसी प्रकार से दाता दयाल जी ने यह सत्यता मेरे जैसे सत्संगियों से प्राप्त की। राधास्वामी दयाल जी ने यह सत्यता राय सालिगराम साहिब जैसे शिष्यों से प्राप्त की। तुम कहां भूले फिरते हो? तुम्हारा मस्तिष्क इतनी बात को समझने के योग्य नहीं। कोई मानव पूर्ण नहीं है, कोई घर से सीख कर नहीं आता। हम लोग यहां से अनुभव करते हैं। तो जिस व्यक्ति ने लिखा है उसको चाहिए था मेरे सामने आता, बात करता। मैंने इनको इसलिए काम दिया है कि इस काम से इनको स्वयं ज्ञान हो जायेगा। जब इनके रूप लोगों के अन्दर प्रकट होने लग जायगे तो यह समझेंगे कि हम नहीं गये। फिर यह अपने जीवन को बनाने के लिए ऊपर

जाकर अपना जीवन बनायेगे। और क्योंकि यह सच्चे होंगे, इनकी rediation से दूसरों को लाभ पहुंचेगा। तो जो गुरु बने हुए हैं यदि मेरे अन्दर में कपट, धोखा, फ़रेब है तब मैं यदि आपको सत्संग कराता हूं तो मेरी rediation आप को पार नहीं ले जा सकती। यह तो Science है। जो कुछ किसी के अन्दर होता है, वही निकलता रहता हैं। वही तो rediation निकलेगी।

दुनिया के धार्मिक व पन्थिक नेताओं जीवों, सन्तों, फ़कीरों और गुरुओं के चरण-कमलों में एक तुच्छ, फ़कीर की करबद्ध प्रार्थना।

बचपन से किसी अनजान वस्तु की खोज में था और मेरे कर्म मुझे एक दृश्य द्वारा हजूर दाता दयाल महर्षि शिवब्रत लाल जी महाराज के चरण-कमलों में ले गये। उन्होंने सन्तमत की शिक्षा दी। मेरे जीवन के अनुभवों ने मुझको आश्चर्य में डाला हुआ है। प्रतिदिन कोई न कोई ऐसी घटनाएं सुनने में आती हैं जहां लोगों के स्वप्न. जाग्रत व अभ्यास में मेरा रूप उनकी सहायता करता है। जाग्रत में लड़कों के परीक्षा के परचे हल करा देता है, मरते समय ले जाता है, डूबते हुए को बचाता है, सुरतें चढ़ाता है। यदि मैं झूठ

बोलूं तो मेरे शरीर को कुष्ठ पड़े । मैंने सन् 1942 के बाद किसी को नाम नहीं दिया और गुरु नहीं बना परन्तु देश-विदेश में हजारों व्यक्ति मेरा ध्यान करते हैं, मेरे रूप से लाभ उठाते हैं और मुझे बिलकुल ज्ञान तक नहीं होता ।

मैं यह क्यों कहता हूं ? इसलिए कि यदि वर्तमान गुरुओं, आचार्यों व ज्ञानियों के साथ भी यही हाल होता है जो मेरे साथ गुज़रता है तो मैं उनसे कहूंगा कि इस सच्चाई को संसार में प्रकट करें । क्यों ? क्योंकि इस अज्ञान के कारण मानव जाति बंट गयी । ईसाई कहते हैं कि ईसा मसीह जीव को स्वर्ग ले जाता है तथा वे अपने इस विचार से लोगों को ईसाई बना रहे हैं । मुसलमानों का विचार है कि उनको हज़रत मुहम्मद द्वारा निजात मिलती है और वे दूसरों को काफ़िर समझते हैं । हिन्दु अपने राग की डफ़ली अलग ही बजाते हैं और दूसरों को म्लेच्छ समझते है और सिक्खों का एक वर्ग खालिस्तान का अलग शोर मचा रहा । इस कलियुग में सन्त आये, उन्होंने उस मन

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

के सम्पूर्ण खेलों और चमत्कारों को और सहायता करने वाली शक्ति को काल और माया कहा। मगर स्पष्ट नहीं कहा। केवल सब का खण्डन किया। उन्होंने स्पष्ट क्यों नहीं कहा ? सन्त कबीर कहते हैं :—

सांच कहूं तो मारसी, यह तुरकानी ज़ोर,
बात कहूं परलोक की, कर गह बांधा चार।

और उन्होंने अपने गुरुमुख धर्मदास जी को कह दिया :—

धर्मदास तोहे लाख दोहाई, सार भेद बाहर न जाई।

कबीर साहिब मुसलमान बादशाहों के समय प्रकट हुए थे। दाता दयाल स्वामी जी, बाबा साबन सिंह व अन्य सन्त अंग्रेजों के राज्य में हुए। स्वामी जी ने कह दिया :—

सन्त बिना कोई भेद न जाने, वो तोहे कहें अलग में।

इस समय अपना राज्य है। शासन, धर्म निरपेक्षता की व्यवस्था लाने का प्रयत्न कर रहा है।

है। मगर क्या धार्मिक झगड़े नहीं होते ? अतः मैंने इस विचार से कि अपना राज्य है इस सच्चाई की घोषणा की है कि ऐ इन्सान ! जो कुछ तुम को मिलता है, तेरे अन्दर जो कुछ होता है वह सब तेरे अपने मन का विश्वास, श्रद्धा और तेरे अपने ही विचार, कल्पना और कर्म का खेल है अर्थात् जिस प्रकार का Suggestions & Impression तुम्हारे मस्तिष्क पर पड़ा हुआ है यह वही है। कोई बाहरी शक्ति आकर तुम्हारी सहायता नहीं करती। जिस प्रकार का तेरा संस्कार विश्वास और श्रद्धा होती है, वैसे ही तू दृश्य देखता है।

मैं कभी अपने आप को समझता हूं कि मैं गलती पर हूं। सम्भव है दूसरे महात्मा आते होंगे। मगर वर्तमान सन्तों और महात्माओं ने मेरे सामने माना है कि वे भी किसी की सहायता करने नहीं जाते। अतः वर्तमान महात्मा यदि शुद्ध हृदय से समझते हैं कि मैं सच्चाई पर हूं और यही कुछ इन लोगों के साथ बीतता है तो सब एक मंच (Platform) पर आयें और संसार को सच्चाई

का मार्ग बतायें कि जिस का मन हो राम को पूजे, जिस का मन चाहे कृष्ण को पूजे या मुहम्मद को पूजे या किसी अर को पूजे। यह सब उसका अपना मन है। यह उसका अपना निजी काम और निजी मुआमला है, इसका बाहर से कोई सम्बन्ध नहीं होना चाहिए। आध्यात्मिकता या वास्तविकता के पाने के लिए तो इस मन से ऊपर निकल कर प्रकाश और शब्द का साधन है। इस वास्तविकता की शिक्षा के सिवाय और कोई साधन धार्मिक एकता का नहीं है। मैं यह सब प्रयत्न क्यों कर रहा हूं ? मुझे क्या पड़ी है ? मैं 95 बर्ष का हूं। मेरा जाने का समय है। मेरे सद्गुरु महर्षि शिवव्रत लाल जी महाराज ने 1933 में मुझे आज्ञा दी थी कि फ़कीर ! समय बदल जायेगा, धर्म व सम्प्रदाथ समाप्त हो जायेंगे। तुम चोला छोड़ने से पहले शिक्षा को बदल जाना। मगर जब मैंने देखा कि दुनिया सच्चाई को सुनने के लिए तैयार नहीं तो मैं यह काम करना नहीं चाहता था। जब स्वयं निर्णय नहीं कर सकता था तो सन् 1942 में

में गया था। यह समझकर कि वह मुझे जो कुछ आज्ञा देंगे मैं उसे मालिक की आज्ञा समझूंगा। उनसे मन की बात कही तो उन्होंने कहा कि गुरु आज्ञा का पालन करना चाहिए और कहा कि तुम निर्भय होकर काम करो मैं तुम्हारा संरक्षक बना रहूंगा। यही कारण है कि मैं यह काम कर रहा हूं।

तीसरे मेरे सद्‌गुरु की मेरे लिए आज्ञा है :—

तेरा रूप है अद्‌भुत, अचरज, तेरी उत्तम देही।
जग कल्याण जगत् में आया, परम दयाल स्नेही।

अब मैं सोचता हू कि मैं संसार का क्या कल्याण कर सकता हूं ? कहते हैं कि धर्म मानव की रक्षा करता हैं। मगर वह धर्म क्या है ? मन, वचन, कर्म से शुद्ध रहना या वेद मार्ग 'शिवसंकल्पमस्तु'। इस समय मेरे अनुभव के आधार पर संसार के सिर पर कठिन मुसीबतें मंडरा रही हैं। वह केवल इसलिए कि हम लोगों के ख्यालात व विचारों में द्वेष, घृणा, ईर्ष्या और शत्रुता आदि हैं। राजनीतिक दलों ने

तो इस सिलसिले में कमाल ही कर दिखाया है। जब से वर्तमान चुनाव प्रणाली (System of election) आयी प्रत्येक स्थान पर घृणा, द्वेष व एक दूसरे को नीचा दिखाना और झूठ व सच द्वारा एक दूसरे को बदनाम करना बढ़ गया है। घेरावों और हड़तालें आदि प्रत्येक स्थान पर हो रही हैं। इसका परिणाम कभी भी अच्छा नहीं हो सकता। क्यों ? जब स्वप्न के ख्यालात जो हमारे वश में नहीं है और जिनमें हमारी नीयत शामिल नहीं होती उनका प्रभाव हमारे शरीर पर पड़ता है। जैसे स्वप्न में हम किसी को घूंसा मारते हैं तो हमारा हाथ हिल जाता है और स्वप्न में कोई दृश्य देखते हैं तो हमारी आवाज़ बडबड़ाती है। व्यक्ति स्वप्न में एक ख्याली औरत बना लेता है उसका वीर्यपात हो जाता है तो जाग्रत में हम जो कुछ जानबूझ कर, सोचते व ख्याल करते हैं, भला उसका प्रभाव हम पर क्यों नहीं होगा। पिछले या इस जन्म में जो कर्म मैंने किये हैं उनके प्रभाव से न मैं बच सकता हूं, न कोई परमसन्त, न कोई अवतार, न पीर-पैग़म्बर ही बचा। इसलिए

मैं सभी धार्मिक नेताओं, गुरुओं और महात्माओं के चरण-कमलों में दास बन कर प्रार्थना करता हूं कि एक मंच (platform) पर आयें और जनता को अपने विचार को ठीक रखने व सुख से जीने अर्थात् मानवता का मार्ग दिखलायें। जब तक पहले किसी में मानवता नहीं आती; नाम-२ चिल्लाने से कोई लाभ नहीं। नाम तो केवल मोक्ष (Salvation of Soul) के लिए है और इसके अधिकारी केवल कुछ व्यक्ति होते हैं :—

नानक कोटिन में कोऊ, नारायण जिन चेत।

एक सच्चाई और है जिस में उच्च स्वर से जनता को सावधान करने की प्रार्थना करता हूं और वह यह है कि कोई सन्त या कोई गुरु किसी को कुछ नहीं दे सकता। सन्त अगर कुछ दे सकता है तो केवल उस के विचारों को बदल सकता है। यदि किसी सन्त की कही हुई बात पूरी हो जाती है तो इस का कारण यह नहीं है कि वह सन्त कुछ करता है बल्कि सन्त के मुख से वही बात निकलती है जो होनी होती है। यह मेरा निज अनुभव है। कबीर साहिब कहते हैं :—

सांच बराबर तप नहिं झूठ बराबर पाप ;
जिस के हृदय सांच है, तिस के हृदय आप ।

क्योंकि मेरे हृदय में सच्चाई है, मन रूपी दर्पण साफ़ है, जो होने वाली बात होती है वह मेरे मुख से निकल जाती है । यह नहीं कि मैं कुछ करता हूं बल्कि उसके कर्म में ही ऐसा होना होता है, वही मेरे मुख से निकलता है । किसी को सहज भाव से कुछ कह देता हूं वह पूरा हो जाता है । मैं कुछ नहीं करता । जो उसके कर्म में होता है मैं वही कहता हूं ।

अन्त में मैं सब महात्माओं और गुरुओं के चरणों में प्रार्थना करूंगा कि आज विज्ञान का युग है । विज्ञान के नियमों ने साबित किया है कि प्रत्येक शरीर से जो उसके गुण और कर्म होते हैं उनकी Rediation निकलती रहती है और वे दूसरों पर प्रभावित होती रहती है । इसके उदाहरण में आप पुलिस वालों के कुत्तों को देखते हैं कि वह चोर व क़ातिल के Radiation जो वातावरण में मौजूद रहती है उसको सूंघते हुए

अपराधी को जा पकड़ते हैं। इसलिए मैं स
प्रचारक महात्माओं को स्वयं सच्चे बनने की आवश्यकता पर ज़ोर देता हूं। इस प्रकार जहां वे अपना जीवन बना लेंगे उनकी rediation से दूसरे लोग जो ऐसे सच्चे, निष्पक्ष व निःस्वार्थ तथा निष्काम महात्माओं का संग करने वाले होंगे, उनके मन स्वयं ही पवित्र हो जायेंगे और उनको वास्तविक लाभ पहुंच सकेगा। तभी दुनिया भी उचित रूप में सच्चाई, सुख, शान्ति तथा कुशलता का मुख देख सकती है।

सूचना

मैं विदेश जाने का कार्यक्रम बना रहा हूं शायद जुलाई के अन्तिम सप्ताह में चला जाऊं—कनाडा, अमेरिका। मैं क्यों जारहा हूं ? लोग मुझे गुरु मानते हैं और यह आशा करते हैं कि मैं उनको लोक व परलोक में सुर दूं। और अन्त में आवागमन से बचा दूं। जो कुछ मैंने अपने जीवन में सीखा है और उसका अनुभव किया है उसके आधार पर अपनी जुम्मेवारी को निभाने व अपनी आत्मा को साथ रखने के लिए जा रहा हूं ताकि जो लोग मुझसे कुछ आशा रखते हैं, उनको सच्चा व सही मार्ग बता दूं। संसार में दो मार्ग हैं एक प्रवृत्ति और एक निवृत्ति। प्रवृत्ति मार्ग की सफलता प्रत्येक आदमी की अपनी वासना और दृढ़ संकल्प शक्ति से ही होती है वासना को दृढ़ बनाने के लिए स्मरण ध्यान है जो आदमी जिस आशा को लेकर स्मरण व ध्यान करता है उसकी वे वासना

पूरी होती है। एक आदमी स्मरण व ध्यान नहीं करता या पूरा विश्वास नहीं रखता उसको प्रवृत्ति मार्ग में सफलता नहीं होती। दुनिया रहस्य से अनभिज्ञ होकर अज्ञान में आकर लुट रही है। गुरु नाम समझ; विवेक और ज्ञान का है। निवृत्ति मार्ग में लाख कोई स्मरण, ध्यान करे अन्तर के दृश्य देखे वह आवागमन से नहीं बच सकता जब तक उसको यह विश्वास नहीं होता कि जो कुछ उसमें फुरनाए फुरती हैं, शक्लें बनती हैं, वे मायो है, कल्पित हैं और उसका इष्ट प्रकाश व शब्द नहीं है वह आवागमन से नहीं बच सकता है।

जीव निबल हैं, अवश हैं, अज्ञानी हैं, मैंने जीवों की निबलता अवशता के कारण खोल-2 कर बता दिये हैं और अज्ञान को भी स्पष्ट शब्दों में प्रकट कर दिया है। मानव इन मन के खेलों में और दृश्यों में फंसकर बुरी तरह से मारा जा रहा है। एक उदाहरण सच्चा बताता हूं। मेरे पास एक वृद्धा स्त्री जो हजूर बाबा सावन सिंह जी की चेली थी छह-2 महीने मेरे पास रहती व छह मास अपने घर चली जाती है।

बहुत वृद्धा है, मैंने उससे पूछा माता। क्यों इस अवस्था में इतना कष्ट सहती है। उससे कहा—मैंने बाबा जी हजूर सावन सिंह जी से नाम लिया था उनके गुजर जाने के बाद दु:खी रहती थी कि मेरा बेड़ा कौन पार करेगा। हव एक रात रो रही थी कि मैं व बाबा सावन सिंह उसके अन्दर प्रकट हुए व बाबा सावन सिंह ने कहा—भाई, तेरा बेड़ा पार यह बाबा फ़कीर करेगा। अगर मैं उसके अनार बाबा सावन सिंह के साथ जाता तो मान लेता-यूं के मैं। नहीं गया तो बाबा सावन सिंह भी नहीं गये। वह क्या था? सब उसके मन के ख्यालात थे। ऐमे चक्कर में आकर तमाम संसार इस मन की तरंगों में बह रहा है।

अब सत्संग से उसकी बात समझ में आई चूंकि मैंने प्रण किया था कि अपना अनुभव कह जाऊंगा। दाता दयाल जी व सावन सिंह जी ने यह काम दिया था इसलिए इस बुढ़ापे में भी कष्ट उठाकर अपना कर्त्तव्य अदा करता हूं।

मैं नहीं चाहता कि लोग फ़कीर चन्द को पूजें। मैं जो कहता हूं उसे समझें व उस पर अमल

करें तब उन्हें प्रवृत्ति व निवृत्ति मार्ग में सफता मिल सकती है।

दाना ! ऐ मालिक ! मैंने आपको दाता दयाल के रूप में माना, आपने दाता दयाल महर्षि जी के रूप में जो आदेश दिया मैंने अपने जीवन में बिलकुल निष्काम निःस्वार्थ हो कर काम किया—आपके आदेश के अनुसार कि चोला छोड़ने से पहले शिक्षा बदल जाना—अब हाथ बांध कर प्रार्थना करता हूं कि अपनी ज़ात में मुझे मिला ले।

———

कर्म भोग

मेरे साहित्य को पढ़ने वालो! कुछ कहना चाहता हूं। मैंने जीवन भर किसी वस्तु की खोज के प्रभावाधीन बड़ी सच्चाई से काम किया। प्रण किया था अपना अनुभव कह जाऊंगा। दाता दयाल जी महाराज का आदेश था कि चोला छोड़ने से पहले शिक्षा को बदल जाना। आज 43 साल से मै यह काम कर रहा हूं। मुझे यह दावा नहीं कि जो कुछ मैंने समझा व अनुभव किया है यह सब लोगों को लाभ पहुंचा सकता है। मेरी अपनी कुरीद अर्थात् हार्दिक खोज को समाप्त करने के लिए मैं अपने लिए इस अनुभव को सत्य मानता हूं।

अब मैं बूढ़ा हो गया। मौज अथवा मेरे कर्मों के कारण मैं इस मानवता मन्दिर बनाने के सिलसिले में फस गया। केवल एक प्रसन्नता है कि इस फसाओ में मैंने निज स्वार्थ अर्थात् धन, मान प्रतिष्ठा आदि नहीं रखा।

मन्दिर में तीन हस्पताल हैं। शिशु स्कूल, प्रैस लायब्रेरी और फ्री लंगर है। खर्चे बहुत बढ़ गये हैं। लगभग 4500 रुपये हर महीने कर्मचारियों को वेतन दिया जाता है। 70000 रुपये की दवाइयां हस्पताल में दी गई हैं। शिशु स्कूल में बच्चों से कोई फीस नहीं ली जाती। आगे सेहत अच्छी थी तो बाहर दौरा करता था। कुछ तो सच्चाई ब्यान करने का अपना कर्तव्य पूरा करता था और कुछ मन्दिर के लिए रुपया जो कोई प्रसन्नता से देता ले आता था। अब शरीर अधिक काम नहीं कर सकता। यदि मेरा साहित्य पढ़ने वाले समझते हैं कि मेरा काम प्राय: सब अधिकारी जनता के लिए लाभदायक है तो जो इच्छा हो मन्दिर की सेवा करें।

सम्पूर्ण साहित्य जो मन्दिर से प्रकाशित होता है डाक खर्च सहित मुफ्त जाता है। मन्दिर पुस्तकों की सूची प्रकाशित कर देता है जो चाहे मुफ्त मंगवा कर पढ़ सकते हैं। मेरी हार्दिक प्रार्थना है कि जो सज्जन मेरे विचारों से सहमत हैं वे अपना जीवन क्रियात्मक बनायें। पुस्तकें या सत्संग केवल

मन के भ्रम तथा शंकाओं को दूर कर सकते हैं। यदि अमल नहीं है तो यह पढ़ना, लिखना भी एक प्रकार की प्रसन्नता देगा, असली शान्ति नहीं मिलेगी। अधिक क्या लिखूं चले चलाओ का समय है, मैंने वसीअत (Will) कर दी है कि मेरे बाद शर्मा दयाल जिन का पूरा नाम डाक्टर ईश्वर चन्द्र शर्मा है (जो अमेरिका में हैं) और मुन्शीराम भगत, मानवता और आध्यात्मिकता का प्रचार करेंगे। मन्दिर का सारा काम ट्रस्ट वालों के आधीन है। ट्रस्ट वालों को कह चला हूं कि अगर किसी समय आर्थिक सहायता न मिलने के कारण काम न चल सके तो दाता दयाल जी महाराज का (Statue) धरती में गाड़ दें और मन्दिर की सारी सम्पत्ति सरकार या किसी और संस्था को दे दें।

सूचना

गुरु पूर्णिमा का सत्संग 17-7-81
शुक्रवार को मानवता मन्दिर,
होशियारपुर में होगा।

ਪੰਜਾਬੀ ਕਤਾਬਾਂ ਦੀ ਸੂਚੀ

1. ਪੰਜ ਨਾਮ ਦੀ ਵਿਗਿਆਨਕ ਵਿਆਖਿਆ। 2. ਅਨੁਭਵ ਦਾ ਨਿਚੋੜ ਮਾਨਵਤਾ। 3. ਸਚਾਈ ਦਾ ਨਿਚੋੜ। 4. ਮਾਨਵਤਾ। 5. ਮਾਨਵ ਕਲਿਆਨ। 6. ਸੱਚਾ ਧਰਮ ਮਾਨਵਤਾ। 7. ਨਾਮ ਦਾਨ।

अंग्रेजी भाषा में साहित्य

1. A Word to Americans. 2. A Word to Canadians.
3. Manavta the true religion.
4. Religious Research. 5. Weight of Soul.
6. Truth Always Wins. 7. Essence of Truth.
8. Science of God Realization.
9. True Sanatan Dharma or True Religion of Humanity. 10. JeewanMukti.
11. Art of happy living. 12. Key to Freedom.
13. Broadcast of Reality in America.
14. Yogic Philosophy of Saints.
15. Nam Dan. 16. Autobiography of Faqir.

हिन्दी भाषा में पुस्तकें

1 अगम का भेद। 2 अनुभवसार।

वन्दनम्

चरण शरण की वन्दना, नित कोइ और न काम ।
गुरु बसो चित आये मेरे, बख्श दो निज नाम ।।
तेरी शरणागत हुआ फिर, किसकी राखूं आस ।
आस तो तेरी दया की, जग से रहूं उदास ।।
रूप ध्याऊं नाम गाऊं, शब्द राता मन ।
आठों याम तेरा ही सुमिरन, भाग मेरा धन ।।
सीस पर निज कर कमल धर, लिया चरण लगाय ।
पतित पापी तर गया, गुरु शरण तेरी आय ।।
मुक्ति की नहीं चाह मन में, भक्ति प्यारी लाग ।
राधास्वामी की दया से, भाग पूरन जाग ।।

मानवता मन्दिर में अगला मासिक सत्संग

19-7-81 को होगा ।

गतांक से आगे :—

आशा नहीं थी, हमने उनको बताया नहीं।

दाता दयाल जी के जीते जी उन्होंने इस भेद को नहीं खोला, क्योंकि उनको यह डर था कि ऐसा करने से दाता दयाल जी के सम्बन्ध में उनके शिष्यों के प्रेम तथा श्रद्धा में कुछ कमी आ जायेगी। इसके साथ ही साथ यह भी सम्भव था कि वह भेंट और धन राशि जो लोग दाता दयाल के आश्रम में देते थे उसमें भी कमी आ सकती थी। इन कारणों से फ़कीर बाबा ने यह उचित समझा कि वह इस भेद को बताने के लिए उस समय की प्रतीक्षा करें, जब ऐसा करने से दाता दयाल जी के धाम को उनके कारण हानि न पहुंचे।

१९३८ में दाता दयाल जी के चोला छोड़ने से पहले फ़कीर बाबा ने उन्हें, उन्हीं के आग्रह पर निम्नलिखित तार भेजा :—

"मैं इस बात की प्रतिज्ञा करता हूं कि मैं अपनी योग्यता और परिस्थितियों के अनुसार विश्व में सत्य का प्रचार करूंगा।"

फ़रवरी १९३९ में दाता दयाल जी परम धाम सिधार गये।

इसके पश्चात् फ़कीर बाबा अपना अधिक से अधिक समय स्मरण, ध्यान और भजन में लगाने लगे। उन्होंने दो पुस्तकें भी लिखीं, जो टीकाएं थीं। एक टीका तो स्वामी जी महाराज द्वारा लिखे हुए 'सार वचन' पुस्तक के उस अध्याय पर थी, जिसका शीर्षक, 'हिदायत नामा' है और दूसरी टीका उन्हीं की कृति 'बारामासा' पर थी। इन दोनों पुस्तकों के प्रकाशित होने के पश्चात् बाबा फ़कीर ने दोनों पुस्तकों की दो-दो प्रतियां व्यास वाले हजूर बाबा सावन सिंह जी महाराज को भेजीं। फ़कीर बाबा हजूर सावन सिंह जी महाराज को दाता दयाल का ही रूप मानते थे और उनका बहुत सम्मान करते थे। हजूर सावन सिंह जी ने इन दोनों पुस्तकों को पढ़ कर फ़कीर बाबा को लिखा, "फ़कीर! मैंने तुम्हारी दोनों पुस्तकों को बड़े ध्यान से पढ़ा है। तुम एक सच्चे फ़कीर हो। तुम राधास्वामी मत की ऐसी श्रेष्ठ सेवा कर रहे हो, जिसके करने में दूसरे गुरु और हमारे धाम सफल नहीं हुए।"

'हिदायत नामा' की टीका में फ़कीर बाबा ने उस

भेद को काफ़ी सीमा तक खोल दिया था, किन्तु फिर भी वह इसका प्रचार खुले आम नहीं कर सके। जिस घटना के पश्चात् उन्होंने इस सत्य का खुला प्रचार आरम्भ किया, उसका उल्लेख उन्हीं के शब्दों में करना उचित होगा। फ़कीर बाबा कहते हैं :—

'फिर भी मैं यह निश्चित न कर सका कि मैं इस सम्बन्ध में क्या करूं। मेरे मन में यह डर था कि यदि मैंने इस सत्य को स्पष्ट शब्दों में कह दिया तो रूढ़िवादी और तंगदिल और ख़ासकर बिना पढ़े लिखे सत्संगी मेरा विरोध करेंगे। इसलिए मैं १९४२ में छुट्टी ले कर सीधा हज़ूर बाबा सावन सिंह जी के पास अपना सन्देह और कठिनाइयां बतलाने के लिए व्यास गया। हज़ूर बाबा सावन सिंह में मेरा अगाध बिश्वास था और मैं उनका दाता दयाल के समान ही सम्मान करता था। मैंने हाथ जोड़ कर उन्हें नम्रता से कहा—"हज़ूर! मुझे आप मेरे उस कर्त्तव्य से मुक्त करें, जो मुझे मेरे गुरु जी महाराज ने निभाने को दिया है। हज़ूर मेरी आपसे प्रार्थना

कि आप मेरे अन्तःकरण के बोझ को हटायें ताकि मैं अपने गुरु की आज्ञा को न पालन करने के पाप से बच जाऊं।" हजूर महाराज ने बड़े प्यार से मेरे कन्धे पर हाथ रखते हुए कहा—"फ़कीर ! मैं स्वयं इस सत्य को दो कारणों से स्पष्ट रूप से लोगों के सामने नहीं कह सका हूं । पहला कारण तो यह है कि आम सत्संगी इस सत्य को जानने के योग्य नहीं हैं। दूसरा कारण यह भी है कि मैं अपनी संस्था की परिस्थितियों के कारण विवश हूं । तुम एक सच्चे फ़कीर हो । तुम अपने गुरु को आज्ञा का पालन निर्भय हो कर करो । मैं हर परिस्थिति में तुम्हारा साथ दूंगा ।"

उसी समय से ही मैं अपने व्यक्तिगत अनुभवों पर लिखने और सत्संग का कार्य करता चला आ रहा हू ।"

फ़कीर बाबा ने अपने इस कर्त्तव्य को निभाते हुए लाखों व्यक्तियों को शारीरिक, मानसिक और आत्मिक लाभ पहुंचाया है और निरन्तर

पहुंचा रहे हैं । उनके सत्संग अधिकतर हिन्दी भाषा में ही प्रकाशित होते हैं और अंग्रेज़ी भाषा में भी इनकी कुछ पुस्तकें छपी हैं। उनके पूरे साहित्य में मानवता को अन्धविश्वास से बचाने तथा सच्ची मानवता को अपनाने पर ज़ोर दिया गया है। उनके जीवन का परम उद्देश्य यह है कि मानव जाति ईश्वर के सच्चे रूप का ज्ञान करके टुकड़े-२ होने से बच जाय। इसी उद्देश्य को ले कर वह इस वृद्ध अवस्था में भी भारत और विदेशों में लम्बी-२ यात्राएं करते हैं।

95 वर्ष की आयु में भी वह लम्बी-२ यात्राओं की कठिनाईयों को इसलिए सहन करते हैं कि वह दाता दयाल जी को दिये हुए उस वचन को निभायें जिसका कि उन्होंने प्रण किया था। वह प्रण था ईश्वर के सच्चे ज्ञान को विश्व के कोने-२ में फैलाना और विश्व भर के दु:खी लोगों के दु:ख दूर करने का प्रयत्न करना।

अगले अध्याय में फ़कीर बाबा के अपने अनेक सत्संगियों के तथाकथित चमत्कारों की व्याख्या

करने से पहले इस विषय में प्रकाश डालना आवश्यक है कि फ़कीर बाबा का सन्देश भारत की सीमाओं से बाहर कैसे पहुँचा। इस विषय में मुझे संक्षिप्त रूप से यह बताना होगा कि मेरा सम्पर्क फ़कीर बाबा से क्यों और कैसे हुआ।

मेरे संस्कार बचपन से ही धार्मिक थे। एक ब्राह्मण वंश में पैदा होने के कारण, मुझे ईश्वर पूजा, ध्यान, समाधि, तथा धर्मग्रन्थों को संस्कृत तथा हिन्दी भाषा में पढ़ने का सुअवसर प्राप्त हुआ। मेरे पिता जी मेरी जन्म भूमि मुलतान शहर (जो अब पाकिस्तान में है) में अंग्रेजी के एक विख्यात अध्यापक थे। उनका हिन्दी, सस्कृत, उर्दू और अंग्रेज़ी चारों भाषाओं पर अधिकार था। वह गीता और बाईबल पढ़ने के बहुत शौक़ीन थे। वह लेखक और उच्च कोटि के उर्दू और अंग्रेजी के कवि भी थे। उनकी अंग्रेज़ी भाषा में प्रकाशित Lovely Poems की पुस्तक उस समय काफ़ी चली थी। उनकी कविताओं की प्रशंसा के पत्र उस समय के भारत के वायसराय और जार्ज पंचम ने उन्हें

लिखे थे। क्योंकि वह स्वयं मिशन स्कूल में पढ़े थे और बाद में उसी स्कूल में अध्यापक हो गये थे और बाईबल पढ़ने की उनकी विशेष रूचि थी इसलिए बाईवल का न्यू टैस्टामैण्ट उन्हें ज़वानी याद था और साथ ही साथ बचपन से गीता प्रतिदिन पढ़ने के कारण गीता के कई अध्याय उन्हें कण्ठस्थ थे। वे बड़े ही विद्वान् तथा कुशाग्र बुद्धि के थे। मैं उनका इकलौता बेटा था। हालां कि बहनों की कमी नहीं थी। मेरी पांच बहनें थीं परन्तु भाई एक भी नहीं था। इसलिए पिता जी का मेरे से प्यार बहुत ही अधिक था। वह जहां भी जाते मुझे अपने साथ ले जाते और बचपन से ही मुझे बहुत अच्छे-२ कपड़े पहनाते और जो मांगता वही ले देते। उन्हीं की कृपा से एक बार पांच बर्ष की आयु में मुझे महामना पण्डित मदन मोहन मालवीय जी के दर्शन हुए। उस समय महामना पण्डित जी किसी धर्म सम्मेलन पर मुलतान शहर में आये हुए थे। वह वहां के नगर सेठ, जो बहुत ही धार्मिक प्रवृत्ति के थे उनके घर ठहरे हुए थे। उनका नाम रायबहादुर हरिचन्द मेहरा था। मेरे पिता जी

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

रायबहादुर जी की पोती को अंग्रेजी पढ़ाते थे और रायबहादुर मेरे पिता जी का बहुत सम्मान करते थे। महामना पण्डित जी के आने पर उन्होंने मेरे पिता जी को भी अपने घर बुलाया और पिता जी अपनी आदत के अनुसार मुझे अपने साथ ले गये। जब हम पण्डित जी से मिले, उस समय अचानक मेरे पिता जी को रायबहादुर जी ने दूसरे कमरे में बुला लिया मैं पण्डित जी महाराज के पास अकेला रह गया। उन्होंने बड़े प्यार से मुझसे पूछा "बच्चे ! क्या तुम्हे गायत्री मन्त्र आता है ? " मैंने तुरन्त ही उन्हें गायत्री मन्त्र गा कर सुना दिया। पण्डित जी बड़े प्रसन्न हुए और प्यार से मेरे माथे का चुम्बन करके मेरे सिर पर हाथ रख कर आशीर्वाद दिया और पांच रुपये का एक बिलकुल नया चमकता हुआ नोट मेरे हाथ में पकड़ा दिया। मैं समझता हूं कि महामना द्वारा यह मेरी दीक्षा थी। यह घटना मुझे आज भी अच्छी तरह से याद है।

कालेज की शिक्षा के दौरान में और आगे चल कर पी० एच० डी० के अनुसन्धान के दौरान में

मुझे भगवान् की कृपा से इस्लाम, सिक्ख, जैन, बौद्ध तथा ईसाई धर्म का गहरा तुलनात्मक अध्ययन करने का अवसर मिला। संस्कृत भाषा में एम० ए० तक की शिक्षा प्राप्त करने के कारण मैंने वेदों, ब्राह्मणों उपनिषदों, और भगवद्गीता आदि का मौलिक अध्ययन भी किया। परम सन्त,परम फ़कीर श्री फ़कीर बाबा के साक्षात्कार करने से पहले प्रकृति मुझे मानो उनके दर्शन करने के योग्य बना रही थी, इसलिए मैं अनेक विद्वानों, धार्मिक प्रचारकों, गुरुओं तथा दार्शनिकों के सम्पर्क में आया।

सभी मुख्य धर्मों का गहरा अध्ययन करने के कारण और मुख्य धर्माचार्यों के सम्पर्क में आने के कारण मेरे मन के अन्दर यह रत्तीभर भी सन्देह नहीं था कि सभी धर्म एक ही ईश्वर को पाने के भिन्न-भिन्न मार्ग या साधन हैं और ईश्वर की एकता एक वैज्ञानिक सत्य है। मेरा यह दृढ़ विश्वास था कि भिन्न-२ धर्मों के आपसी झगड़े या विरोध किसी बड़ी भारी भूल पर ही आधारित हैं। मुझे आज

तक किसी धर्म से घृणा करने का विचार तब ही नहीं आया।

सौभाग्य वश मुझे वैदिक दर्शन का गहरा अध्ययन, समकालीन भारत के महान् विद्वान्, जयपुर निवासी पण्डित मोतीलाल शास्त्री की कृपा से ही हुआ। पांच वर्ष की आयु से ही मैं साधना करता चला आ रहा हूं इसलिए मेरा व्यक्तित्व केवल बौद्धिक स्तर तक ही सीमित नहीं रहा बल्कि ईश्वर भक्ति के भाव से भी सिंचित रहा।

बचपन से ही मुझे ईश्वर के साक्षात् दर्शन करने की लालसा रही है। सम्भवतया इसी कारण ईश्वर की महती कृपा से मेरी शिक्षा-दीक्षा इसी प्रेरणा के अनुसार ही चलती रही। जिस समय मैंने गवर्नमैण्ट एमरसन कालेज मुलतान में दाखला लिया, उस समय प्रायः सभी अच्छे घरानों के अच्छे नम्बर लेने वाले छात्र इन्जीनीयर अथवा डाक्टर बनने के उद्देश्य से साईन्स के विषय लेते थे। हालांकि मैंने मैट्रिक अच्छे नम्बर ले कर

(14 वर्ष की आयु में) पास की थी फिर भी बहुत लोगों के कहने के पश्चात् भी कि मैं साईन्स लूं, मैंने दर्शनशास्त्र, अंग्रेज़ी तथा संस्कृत के विषय ही चुने। प्रकृति की बात देखो कि पहले ही वर्ष मेरा सम्पर्क जिन-२ प्रोफेसरों से हुआ वे प्रायः सभी बहुत ही धार्मिक प्रवृत्ति के थे। उनमें से कालेज के वाइस प्रिन्सीपल प्रोफेसर सदानन्द, महात्मा हंसराज जी के लड़के थे जो अपने विख्यात पिता की भांति आर्य समाजी न हो कर स्वामी सियाराम के चेले थे और योगाभ्यास करते थे। उनका मेरे ऊपर विशेष प्रेम था क्योंकि मैं कालेज में प्रथम स्थान लेता था और वाद-विवाद सम्मेलनों में सदा बोलता रहता था। दूसरे प्रोफेसर जिन्होंने मुझे प्रभावित किया वे दर्शन-शास्त्र पढ़ाते थे और उनका नाम सावन दास था। वह प्रोफेसर होने के साथ-साथ ईसाई पादरी भी थे। उनकी मुझ पर बहुत कृपा रही। वह मुझे अपने घर और कई बार गिरजाघर भी ले जाते थे। उन्होंने ईसाई मत के विषय में मुझे बहुत कुछ बताया। मेरे दर्शनशास्त्र के दूसरे

प्रोफेसर ताज मोहम्मद ख्याल, दर्शनशास्त्र के विद्वान् होने के साथ-२ एक उच्च कोटि के उर्दू के कवि और इस्लाम धर्म के विद्वान् थे। वह भी मुझे बहुत प्यार करते थे और प्राय: घर बुलाते रहते थे। इस्लाम धर्म के विषय में मैंने उनसे बहुत ज्ञान प्राप्त किया। मेरा अंग्रेज़ी भाषा के प्रोफेसर सरदार गुरुचरण सिंह जी थे, जिनसे मुझे सिक्ख धर्म का ज्ञान प्राप्त हुआ। मेरे संस्कृत के प्रोफेसर पण्डित गणपति राय जी उच्च कोटि के विद्वान् थे। उन्होने संस्कृत भाषा के साथ-2 हमें भगवनद्‌गीता और उपनिषदों की शिक्षा भी दी।

संस्कृत की एम० ए की शिक्षा पाने लिए मैं पंजाब यूनिवर्सिटी के ओरिएण्टल कालेज लाहौर में गया। यह कालेज यूनिवर्सिटी का एक निराला ही कालेज था जिसमें केवल संस्कृत, फ़ारसी और अरबी पढ़ाई जाती थी। डाक्टर सर मोहम्मद इक़बाल, विख्यात उर्दू कवि जिन्होंने अमर कविता, 'सारे जहां से अच्छा हिन्दोस्तान हमारा' लिखी थी, किसी समय उसी कालेज के प्रिन्सीपल रहे थे।

जिस समय मैं वहां पढ़ता था संस्कृत के महान् विद्वान् डाक्टर लक्ष्मण स्वरूप जी हमें वैदिक व्याकरण पढ़ाते थे और संस्कृत के विख्यात विद्वान् डा० सूर्यकान्त हमें वेद पढ़ाते थे। प्रोफ़ेसर जगन्नाथ अग्रवाल हमें ब्राह्मी लिपि के शिलालेखों का ज्ञान कराते थे। इसी प्रकार डा० रघुवीर, जिन्होंने भारत स्वतन्त्र होने के पश्चात् हिन्दी भाषा में वैज्ञानिक शब्दों के कोष लिखे हैं, सप्ताह में हमें एक बार संस्कृत भाषा का तुलनात्मक अध्ययन कराते थे।

मेरी दर्शनशास्त्र की एम० ए० करने के दौरान में मेरा सम्पर्क शिक्षा शास्त्री प्रोफेसर जी० सी० चैटर्जी से हुआ, जो पाश्चात्य दर्शन के एक विख्यात विद्वान् थे और इंगलैंड की विश्व विख्यात यूनिवर्सिटी कैम्ब्रिज के प्रोफेसर जी० ई० मोर के शिष्य थे। जब मैंने पी० एच० डी० की उपाधि के लिए रिसर्च की, तो मेरे सुपरवाईज़र डा० राधाकृष्णन के परम शिष्य, विश्व विख्यात प्रोफेसर पी० टी० राजू रहे। इसी सम्बन्ध में मेरी डा०

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

राधाकृष्णन से कई बार भेंट हुई और बाद में वह मुझे अपने बेटे की भांति समझने लगे। १९६३ में जब मैं अमेरिका में दर्शनशास्त्र पढ़ा रहा था उस समय डा० राधाकृष्णन भारत के राष्ट्रपति थे और वह अमेरिकन राष्ट्रपति जाह्न कैनेडी के निमन्त्रण पर अमेरिका आये। उन्होंने तीन दिन तक मुझे अपने साथ रखा। इस अवसर पर मैंने उनके निकट रह कर उनका जो प्यार देखा उससे मैं इस परिणाम पर पहुंचा कि वह न हो केवल विश्व विख्यात उच्च कोटि के लेखक, दार्शनिक और भारत के उच्चतम अधिकारी थे, बल्कि उसके साथ-२ वह महा आकर्षक, सच्चे मानव और ईश्वर भक्त भी थे।

मेरी पी० एच० डी० के रिसर्च के दौरान में मेरा सम्पर्क तेरापन्थी जैन आचार्य तुलसी गणि, जयपुर के जैन विद्वान् पण्डित चैन सुख दास, विख्यात विद्वान् मुनि जिन विजय जी महाराज तथा डा० ए० एन० उपाध्याय और हिन्दु संस्कृति के प्रकाण्ड विद्वान्, मानव आश्रम के प्रवर्त्तक जयपुर निवासी

पण्डित मोतीलाल जी शास्त्री से हुआ, जिन्होंने वेदों, उपनिषदों भगवद्गीता के वैज्ञानिक पहलू पर एक लाख पच्चीस हज़ार का साहित्य लिखा। उनकी विद्वत्ता से प्रभावित हो कर भारत के पहले राष्ट्रपति महामना डा० राजेन्द्र प्रसाद जी उनके शिष्य बन गये और उन्हें १९५५ में हिन्दु संस्कृति की व्याख्या के लिए राष्ट्रपति भवन में पांच दिन में पांच भाषण देने के लिए आमन्त्रित किया। इन भाषणों को सुनने के लिए उस समय के भारत के बड़े-२ विद्वानों, दार्शनिकों तथा लेखकों को भी आमन्त्रित किया गया। इन सभी भाषणों की सभी विद्वानों ने बहुत ही प्रंशसा की। बाद में ये पांचों व्याख्यान राष्ट्रपति जी के आग्रह से तथा उन्हीं द्वारा भूमिका लिखे जाने के बाद एक पुस्तक के रूप में प्रकाशित किये गये, जो एक अमूल्य निधि है।

पण्डित मोतीलाल जी शास्त्री की मेरे ऊपर बहुत ही कृपा थी। पांच वर्ष तक लगातार मैं हर गर्मी की छुट्टियों में उनके 'मानव आश्रम' में

रह कर प्रतिदिन उनके चरण स्पर्श करके उः से वेदों का ज्ञान प्राप्त करता था। वह पूर्ण कर्मकाण्डो थे, परन्तु बड़े हो दयालु और पूर्ण मानववादी। एक दिन जब उन्हें इस बात का पता चला कि मेरा विवाह एक ब्राह्मण लड़की से न हो कर एक अरोड़ा लड़की से हुआ है तो मेरी परीक्षा लेने के लिए मुझे डांटा और कहा "ईश्वर चन्द्र! तुमने एक उच्च कुल के ब्राह्मण हो कर एक अब्राह्मण कन्या से क्यों विवाह किया?" मैं चुप रहा, तभी दयालु पण्डित जी अपनी सुन्दर मुस्कराहट से बोले, "मैं मजाक कर रहा था; तुम्हारी पत्नी में एक सच्ची ब्राह्मणी के लक्षण हैं; वह बहुत अच्छी है। आज से वह मेरी बेटी हुई।" उसी दिन से वह मेरी पत्नी भाग्य को या तो बेटी कह कर बुलाते या शरमाती। पण्डित जी के असीम प्यार को याद करके आज भी मेरी पत्नी के आंसू बहने लगते हैं।

पण्डित जी दिन में 18 घण्टे ही लिखते थे। और केवल दो घण्टे ही सोते थे। दो घण्टे पूजा

पाठ, साधना इत्यादि और दो घण्टे अपने परिवार के साथ बिताते थे। उन्होंने ५२ वर्ष की अल्प आयु में इस शरीर को छोड़ दिया। उनके शरीर छोड़ने के पश्चात् मुझे उनसे और भी अधिक प्रेरणा मिली और मैंने उनके विचारों के अनुसार Ethical Philosophies of India लिखी, जो १९६५ में इंगलैण्ड के विश्व विख्यात प्रकाशक जार्ज एलन एण्ड अनविन तथा अमेरिका के एक प्रकाशक द्वारा साथ-२ छपी। पाश्चात्य विद्वानों ने इसे इतना पसन्द किया कि यह पुस्तक अमेरिका, इंगलैण्ड, आस्ट्रेलिया तथा कनेडा के मुख्य कालेजों तथा यूनिवर्सिटियों में पढ़ाई जाने लगी और इसे फिर छापा गया। इस पुस्तक के कारण मुझे कई बार अमेरिका पढ़ाने के लिए बुलाया गया। पण्डित जी के विषय में यहाँ यह सब लिखने का मेरा अभिप्राय यह है कि मैं यह बताना चाहता हूं कि महा विद्वान् पण्डित जी ने पांच वर्ष की अवधि में अपने अनन्त ज्ञान के कारण वेदों तथा उपनिषदों के तत्त्व की जो बातें मुझे बताईं वही सभी बातें फ़कीर बाबा ने अपनी अति दया से सीधी-सादी भाषा में अपने अनुभव के आधार पर बताईं।

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

उनमें कुछ भी तो अन्तर नहीं है । इससे यह सिद्ध होता है कि सच्चाई एक है।

यद्यपि सभी धर्मों के परस्पर सहयोग में मेरा बचपन से ही विश्वास रहा है, फिर भी उपरोक्त सभी महानुभावों के सम्पर्क में आना मेरे लिए एक परम सौभाग्य था। इनके सम्पर्क से मेरे मन के रहे-सहे सन्देह भी दूर हो गये और धर्मों की एकता में मेरा विश्वास और भी अधिक हो गया और मेरी साधना का समय भी बढ़ता गया। परन्तु इतना सब होते हुए भी, एक सफल अध्यापक, लेखक तथा दार्शनिक होते हुए भी मुझे पूरा सन्तोष नहीं था। मैं इस बौद्धिक स्तर से भी ऊपर उठ कर ईश्वर का साक्षात्कार करना चाहता था। बचपन से ही ईश्वर के दर्शन करने की मेरी लालसा कम नहीं हुई। १९५९ में एक रात को मुझे एक स्वप्न आया, जिसे मैंने प्रात: उठते ही अपनी पत्नी को बताया। इस स्वप्न में मुझें एक बहुत ही दयालु, आकर्षक तथा जीवन्मुक्त एक ऐसे सफेद दाढ़ी वाले महात्मा के दर्शन हुए, जिनकी मुस्कराहट से रोशनी फैल रही थी।

उन्होंने मेरे सिर पर हाथ रख कर आशीर्वाद देते हुए कहा, 'तुम्हें इसी जीवन में ही ईश्वर का साक्षात्कार होगा और मुक्ति मिलेगी।' वह महात्मा मुझे अपने साथ देश, विदेशों में ले गये। मैंने अपने आपको उनके साथ यात्रा करते हुए तथा उनको विदेशियों से परिचित कराते हुए देखा। यह भी देखा कि विदेशी उनके भाषणों से बहुत प्रभावित हुए।

समय बीतने पर मैं इस घटना को एक दम भूल हो गया और इसकी याद मुझे तभी आई, जब फ़कीर बाबा से मेरी पहली भेंट हुई। यह सितम्बर १९६५ की बात है। मैं जब अमेरिका में दूसरी बार पढ़ाने के दौरे से वापिस देहली पहुंचा तो अपने बहनोई श्री रमेशचन्द्र के घर ठहरा। उन्हीं दिनों परम सन्त फ़कीर दयाल जी महाराज बिरला मन्दिर में ससंत्ग दे रहे थे। रमेशचन्द्र उनके सत्संग में जा रहें थे, उन्होंने मुझसे कहा "एक बहुत बड़े महात्मा आज सत्संग दे रहे हैं, यदि आप चाहें तो मेरे साथ चल कर उनके सत्संग का लाभ उठा

सकते हैं।" मैंने न तो कभी फ़कीर दयाल जी का नाम सुना था और न ही उनको कभी देखा था। अमेरिका से मैं कुछ घण्टे पहले ही लौटा था। इस लम्बी यात्रा से मैं बहुत थका हुआ था और मुझे नींद सी आ रही थी। एक बार मेरी इच्छा हुई कि मैं रमेश जी को मना कर दूं परन्तु न जाने कौन सी शक्ति मुझे फ़कीर बाबा के दर्शनों के लिए खींच रही थी, अतः मैं रमेश जी के साथ हो लिया। जब हम हाल में पहुंचे तो फ़कीर बाबा का सत्संग चल रहा था और लगभग दो हज़ार आदमी उसका लाभ उठा रहे थे। ज्यों ही मेरी नज़र स्टेज पर बैठे हुए दिव्य महात्मा पर पड़ी, मैं आश्चर्य से भौंचक्का रह गया। यह वही अति आकर्षक महात्मा थे जिनको छः वर्ष पूर्व मैंने स्वप्न में देखा था। मैं उनके सुन्दर रूप को देखने में इतना तल्लीन हो गया कि मुझे वहां के वातावरण का भी ज्ञान नहीं रहा और मैं एक बुत की भांति वहां खड़ा का खड़ा रह गया। इतने में रमेश जी ने मुझे हिला कर हाल में सबसे पीछे वाली पंक्ति में बैठने को कहा। जब हम

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

दोनों बैठने वाले ही थें कि इतने में फ़कीर बाबा ने हमें देखा और उन्होंने रमेश जी को इशारा करके हम दोनों को स्टेज पर आने को कहा। जब मैंने स्टेज पर जा कर उनके कोमल चरणों का स्पर्श किया तो उन्होंने बड़े प्यार से मेरे सिर पर हाथ रख कर आशीर्वाद दिया और मुस्करा कर बोले "तो तुम हो शर्मा दी ग्रेट ! तुम मेरे पास ही बैठ जाओ।" मैं अपने नाम के सम्बोधन से चकित रह गया कि वह मेरा नाम कैसे जान गये। सम्भवतया रमेश जी के साथ होने के कारण उन्होंने समझ लिया होगा कि मैं उनका कोई सम्बन्धी हूं, इसलिए शर्मा कह दिया होगा। परन्तु 'तो तुम हो शर्मा दी ग्रेट' उन्होंने क्यों कहा, जब कि वह मुझे जानते ही नहीं थे। उस समय मुझे इस रहस्य का पता नहीं चला। बाद में मुझे परमहंस रामकृष्ण तथा स्वामी विवेकानन्द की उस घटना का स्मरण हो आया जिसमें परमहंस जी का उस समय के नरेन्द्र नामक नवयुवक (जो बाद में संसार में विवेकानन्द के नाम से विख्यात हुए) से पहली भेंट हुई थी। उस समय के नास्तिक

नवयुवक नरेन्द्र जब परमहंस की बड़ी प्रशंसा सुनने पर एक मित्र के साथ उन्हें देखने के लिए आये, तो परमहंस, जिन्होंने युवक नरेन्द्र को कभी देखा भी नहीं, सम्बोधित करके बोले थे 'तो तुम आ ही गये नरेन्द्र ! मैं तुम्हारी प्रतीक्षा में ही था।' नवयुवक नरेन्द्र भौंचक्के रह गये कि परमहंस उनका नाम कैसे जानते थे और उनकी प्रतीक्षा क्यों कर रहे थे। इस घटना के स्मरण हो जाने से जब मुझे इस भेद का पता चल गया कि सत् पुरुष सर्वज्ञ और अन्तर्यामी होते हैं, तो फ़कीर बाबा को मेरे विषय में जानने का रहस्य तब रहस्य नहीं रहा और मेरी श्रद्धा उनमें दिन प्रति दिन बढ़ती चली गई।

उस दिन से फ़कीर बाबा के आशीर्वाद से मुझे हर साल अमेरिका बुलाया जाने लगा। १९६७ में मुझे एक साथ तीन साल वहाँ पढ़ाने का निमन्त्रण आया। किन्तु इस समय तक मेरी ये यात्राएं पढ़ाने तक ही सीमित रहीं। १९६८ में फ़कीर बाबा ने अति कृपा करके मुझे एक पत्र लिखा। उस समय मैं वर्जीनिया के एक कालेज

में पढ़ा रहा था। इस पत्र में उन्होंने मुझे लिखा, "शर्मा ! तुम्हारा अमेरिका में जाने का उद्देश्य केवल कालेजों तथा यूनिवर्सिटियों में पढ़ाने तक ही नहीं होना चाहिए। तुम वहां के लोगों को आध्यात्मिक लाभ भी पहुंचाओ। प्रकृति ने तुम्हें उन लोगों के साथ लगाया है, तुम उनमें आध्यात्मिक जागृति पैदा करो। सच्चाई को संसार के सभी लोगों में फैलाने के लिए प्रकृति ने तुम्हें मेरे सम्पर्क में ला दिया है। इस सच्चाई के फैलाव के लिए केवल तुम और मैं ही नहीं बल्कि बहुत से दूसरे लोग भी मालिक की मरज़ी से घसीटे जा रहे हैं, क्योंकि विश्वशान्ति के लिए संसार के दो शक्तिशाली राष्ट्र अमेरिका तथा रूस के वातावरण को बदलना अत्यन्त आवश्यक है, नहीं तो सारी दुनिया बरबाद हो जायेगी। सौभाग्यवश अमेरिका के निवासी भगवान् में आस्था रखने वाले तथा जिज्ञासु हैं, तुम उनकी भलाई के लिए अपना अधिक से अधिक समय लगाओ। इसके लिए संन्यास लेने की आवश्यकता नहीं है। अपनी पत्नी तथा बच्चों के प्रति कर्त्तव्य को निभाना भी अत्यन्त आवश्यक

है, परन्तु इस कर्त्तव्य को निभाते हुए भी अपने परम उद्देश्य को मत भूलो और अधिक से अधिक समय साधना तथा लोककल्याण के लिए लगाओ। मेरा आशीर्वाद सदा तुम्हारे साथ रहेगा। अब को बार जब तुम भारत आओगे तो मैं पूरी तरह से जांच करूंगा।"

फ़कीर बाबा के इस प्यार भरे और प्रेरणा देने वाले पत्र को मैंने कई बार पढ़ा और हर बार मुझे परम आनन्द प्राप्त हुआ। इस पत्र के मिलने के कुछ ही दिन पश्चात् अमेरिका की एक अन्तर्राष्ट्रीय संस्था 'ऐसोसिएशन फार रिसर्च एण्ड एनलाईटमैंन्ट (जिसका संक्षिप्त नाम ए० आर० ई० है)' के मुखिया श्री ह्यू लिन केसी ने मुझे वर्जीनिया बीच में बुलाया जहां उनकी संस्था का बड़ा भारी केन्द्र है। इस संस्था के संचालक श्री ह्यू लिन केसी के स्वर्गीय पिता एडगर केसी थे जिनकी १९४५ में मृत्यु हो गई थी। एडगर केसी पाश्चात्य जगत् के एक सिद्ध पुरुष माने जाते हैं उन्होंने अपने जीवन काल में अनेक तथाकथित चमत्कार दिखाये और अनेकों भविष्यवाणियां कीं।

[शेष क्रमशः]